ISSN: 2456–4397 RNI No.UPBIL/2016/68067 Vol-6* Issue-6* September-2021
Anthology : The Research

समसामयिक कला में अमूर्त कला की प्रासंगिकता

Relevance of Abstract Art in Contemporary Art

Paper Submission: 10/09/2021, Date of Acceptance: 23/09/2021, Date of Publication: 24/09/2021

सुनीता मीणा
शोधार्थी
चित्रकला विभाग,
राजस्थान विश्वविद्यालय,
जयपुर, राजस्थान, भारत

जगदीश प्रसाद मीणा
असिस्टेन्ट प्रोफेसर
चित्रकला विभाग,
राजस्थान विश्वविद्यालय,
जयपुर, राजस्थान, भारत

सारांश

19वीं सदी के उत्तरार्द्ध में पश्चिमी कला जगत में आये वैचारिक परिवर्तन का प्रभाव सृजनात्मकता के हर दशक में देखा जा सकता है। जिसमें कलाकारों ने रंग, रेखा, टेक्सचर का मुक्त धरातल पर प्रयोग कर समसामयिक कला जगत में रचनात्मकता की नयी मुहिम स्थापित की है और मूर्त के सरोकार से विमुक्त होकर अमूर्त संयोजन को स्वीकार करते हुए कलाकारों ने रूप के स्थान पर भावाभिव्यक्ति को प्रधानता दी है अतः हम कह सकते हैं कि कला जगत में आये इस परिवर्तन का अमूर्त कला के क्षेत्र में विशिष्ट योगदान रहा। जिसे हम पाश्चात्य कला-वादों में आसानी से देख सकते हैं जिसमें कलाकारों ने धीरे-धीरे रूपाकृतियों को तोड़कर संयोजित करते हुए नित-नये प्रयोग किये हैं जहाँ कलाकार किसी भी रूप के बन्धन में बन्धा नहीं है वहाँ केवल कलाकार की स्वतन्त्र अमूर्त अभिव्यक्ति को महत्व दिया गया है इस तरह पाश्चात्य कला की बदलती धाराओं से भारतीय कला भी प्रभावित हुई जिसका प्रभाव सर्वप्रथम बंगाल शैली के कलाकारों पर देखा गया। उन्होंने ब्रिटिश कला स्कूलों के माध्यम से कला में आये आधुनिकरण से कला जगत के हर क्षेत्र को परिचित करवाया और कला की नवीन धाराओं का प्रचार-प्रसार किया। अतः राजस्थानी कलाकारों की कला में भी बीसवीं सदी के छठवें दशक में परिवर्तन की क्रान्ति देखी जा सकती है जहाँ बंगाल शैली से आये शैलेन्द्रनाथ-डे व असित कुमार हल्दार का विशिष्ट योगदान रहा जिन्होंने राजस्थान के कलाकारों को कला में आये परिवर्तनों से अवगत कराया और नवीन प्रयोग करने के लिए प्रोत्साहित किया। जिससे कलाकारों ने मूर्त व अमूर्त के भेद को समझा और स्वतन्त्र अभिव्यक्ति को महत्व दिया एवं अमूर्त कला के सौन्दर्य-गुण को भी स्वीकार किया। साथ ही आजीवन अमूर्त रचनाओं का सूत्रपात करते हुए समसामयिक कला के क्षेत्र में विशिष्ट प्रासंगिक भूमिका निभाई।

The impact of the conceptual change that took place in the Western art world in the late 19th century can be seen in every decade of creativity. In which artists have established a new campaign of creativity in the contemporary art world by using color, line, texture on a free surface and by accepting the abstract combination, freed from the concern of the tangible, the artists have given priority to the expression instead of the form. We can say that this change in the art world had a special contribution in the field of abstract art. Which we can easily see in western art-isms, in which artists have gradually made new experiments by breaking and combining the motifs, where the artist is not bound by any form, only the artist's free abstract expression is given importance. In this way, Indian art was also affected by the changing currents of Western art, whose influence was first seen on the artists of Bengal style. He introduced every area of the art world to the modernization in art through British art schools and propagated new currents of art. Therefore, a revolution of change can be seen in the art of Rajasthani artists in the sixth decade of the twentieth century, where Shailendranath-Dey and Asit Kumar Haldar, who came from Bengal style, made a special contribution, who made the artists of Rajasthan aware of the changes in the art and new encouraged to use. Due to which the artists understood the difference between tangible and abstract and gave importance to free expression and also accepted the aesthetic quality of abstract art. Along with this, he played a uniquely relevant role in the field of contemporary art, initiating lifelong abstract compositions.

मुख्य शब्दः समकालीनता, अमूर्तता, भावाभिव्यक्ति, अन्तःकरण, आधुनिक कला, वस्तुनिरपेक्ष, नवजागरण, प्रस्फुटित, रचनात्मक बिम्ब, आध्यात्मिक,सृजनात्मकता, ज्यामितिय, स्वच्छन्द, प्रतीकात्मक, वस्तुपरकता।

Contemporary, Abstraction, Expressionism, Conscience, Modern Art, Objective, Renaissance, Erupted, Creative Image, Spiritual, Creativity, Geometry, Freelance, Symbolic, Objectivity.

प्रस्तावना

किसी भी देश की संस्कृति एवं सभ्यता का मूल्यांकन कला के माध्यम से किया जाता है। कला सौन्दर्य का सृजन करती है। सौन्दर्य का स्वरूप देश, काल तथा परिस्थिति के अनुसार परिवर्तित होता रहता हैं। यही कारण है कि कला का स्वरूप भी देश, काल तथा परिस्थिति के अनुरूप समय

पर परिवर्तित होता रहा है। भारत में कला का स्वरूप प्रमुखतः धार्मिक, सामाजिक एवं राजनैतिक मान्यताओं के आधार पर परिवर्तित होता रहा है। भारतीय कला प्रागैतिहासिक काल से विभिन्न शैलियों के रूप में दृष्टिगत होती रही है। जोगीमारा, अजन्ता, बाघ, सित्तनवासन, ऐलोरा आदि कला केन्द्र भारतीय कला इतिहास का स्वर्णिम समय रहा है। मध्यकाल की भारतीय कला लघुचित्रों के रूप में उपलब्ध होती है। राजस्थानी, पहाड़ी तथा ईरानी कला शैलियों की विशिष्टताओं के सामंजस्य से इसी समय एक नीवन कला शैली का उद्भव हुआ, जो भारतीय कला इतिहास में मुगल कला शैली के नाम से प्रसिद्ध हुई। इस प्रकार 19वीं शताब्दी के मध्य तक कला शैलियों के माध्यम से भारतीय कला की परम्परा विभिन्न रूपों में विकसित होती रही। तथापि मुगल साम्राज्य के पतन तथा राज्याश्रयों के अभाव में मध्यकालीन कलाकार संरक्षण की खोज में यत्र-तत्र भटकते रहे। इस कारण भारतीय कला के सहज विकास क्रम में गतिरोध उत्पन्न हो गया। अंग्रेजों का भारत में आगमन भी इसका महत्वपूर्ण कारण था।[1]

भारतीय कला इतिहास में आधुनिक शब्द का प्रयोग लगभग 1880 ई. में राजा रवि वर्मा की कला शैली के लिए सर्वप्रथम किया जाने लगा था। राजा रवि वर्माप्रथम भारतीय चित्रकारथे जिन्होंने यूरोपीय तकनीक में भारतीय विषयों का चित्रण किया। अंग्रेजी शिक्षा प्राप्त करके राजा रवि वर्मा ने कला का सूत्रपात तो किया किन्तु अतीतकालीन भारतीय कला आदर्शों की गौरवशाली परम्परा से अनभिज्ञ रहे। तथापि राजा रवि वर्मा का यह प्रयासनवीन युग के सूत्रपात का सूचक था जिससे भारतीय कलाकी अवरुद्ध धारा को एक नवीन मार्ग मिला। पूर्वी और पाश्चात्य प्रभावों के मिश्रण से कला में नवीनता तो आयी, किन्तु कला को विदेशी जकड़ से मुक्त करने का काम "आचार्य अवनीन्द्रनाथ टैगोर" ने किया। अवनीन्द्रनाथ टैगोर, ई.बी. हेवेल तथा कुछ अन्य कलाकारों के प्रयास से 1907 ई. में कोलकाता में "इण्डियन सोसायटी ऑफ ओरिएण्टल आर्ट" की स्थापना हुई। इस संस्था के तहत कला प्रशिक्षण एवं संरक्षण का कार्य सुचारू रूप से चलने लगा। इसी क्रम में अवनीनन्द्रनाथ टैगार ने भी विलुप्त होती हुई भारतीय कला परम्परा की ओर ध्यान आकर्षित करवाकर भारतीय कला को नया जीवन प्रदान किया।

इस दौरान भारत में भारतीय राष्ट्रवादी नेताओं ने स्वदेशी की अवधारणा को बढ़ाया दिया। यह ब्रिटिश साम्राज्य के विरुद्ध आत्मनिर्भर बनने का एक आन्दोलन था, जो मुख्यतः बंगाल में प्रभावी हुआ। इस आन्दोलन का मुख्य उद्देश्य ब्रिटिश निर्माताओं का बहिष्कार करने के साथ-साथ पश्चिमी साहित्य, कला, संस्कृति को समाप्त कर घरेलू और स्थानीय उत्पादों, उद्योगों, कला और संस्कृति को बढ़ावा देना था।

बीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ में बंगाल स्कूल ने भारतीय चित्रकला को एक बार फिर से पूर्नजीवित किया। जिसने भारतीय स्वतन्त्रता आन्दोलन में एक विशिष्ट भूमिका निभाई। अब कला के नवजागरण का केन्द्र बंगाल बन गया था जहाँ के कुछ प्रतिभाशाली कलाकारों ने अवनीन्द्रनाथ ठाकुर के साथ मिलकर भारतीय कला को नवीन व निश्चित दिशा दी और सांस्कृतिक निर्माण किया। नन्दलाल बोस शान्ति निकेतन में, असित कुमार हल्दार, क्षितीन्द्रनाथ मजुमदार लखनऊ व लाहौर में, के. वेंकटप्पा मैसूर में, शैलेन्द्रनाथ-डे जयपुर में, शारदाचरण उकील दिल्ली में, देवी प्रसाद राय चैधरी मद्रास में, तथा नागहट्ट श्रीलंका में नवीन कला धारा के प्रचार में लग गये और धीरे-धीरे नवजागरण की लहर पूरे भारत में फैल गयी।

कला के क्षेत्र में पुर्नजागरण की क्रान्ति का प्रभाव राजस्थान पर भी देखा गया। जब शैलेन्द्रनाथ डे "राजस्थान स्कूल ऑफ आर्ट" के प्राचार्य के रूप में जयपुर आये तब कला जगत में स्वतन्त्र वैचारिकता की भावना को प्रोत्साहन मिला और जिससे कलाकारों ने अपनी काल्पनिक अभिव्यक्ति को चित्रित करने का प्रयास किया जिसमें विषयगत रूपाकारों को कम महत्व दिया गया अतः कलाकारों द्वारा मूर्त विचारों को तोड़कर, नवीन काल्पनिक सम्भावनाओं को जन्म दिया गया जो समसामयिक कला के क्षेत्र में अमूर्त कला के रूप में हमारे समक्ष प्रस्तुत हुआ। राजस्थान के कलाकारों में अमूर्त कला के क्षेत्र में ज्योतिस्वरूप, सुरेश शर्मा, मोहन शर्मा, विद्यासागर उपाध्याय, शबीर हसन काजी आदि के नाम प्रमुख उल्लेखनीय है।

अध्ययन का उदेश्य

समसामयिक कला में अमूर्त कला की प्रासंगिकता करना इस शोध पत्र का उद्देश्य है

अमूर्त कला का परिचय

कला, समाज का दर्पण है कला जीवन का अनुकरण मात्र नहीं है, बल्कि मौलिक सृजन है, पुनर्निर्माण है, सृष्टि है। अतः उसके सभी पक्षों का विस्तृत अध्ययन करना आवश्यक है जो कला इतिहास में विकास को जानने के लिए महत्वपूर्ण है। सम्पूर्ण सृष्टि एक विशेष कलाकृति है हम सभी इसी के अंश हैं। इस आधार पर हमारी कलाऐं भी इसी से प्रभावित है। कला जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति किसी न किसी रूप से करती है। अतः हम कह सकते हैं कि कला अनेक रूपों में हमारे साथ इस तरह से रची हुई है जिसकी व्याख्या या शब्दों में परिभाषित करना आसान नहीं है।

आदिमानव के जन्म के साथ चली आ रही, विभिन्न कलाऐं हमारे जीवन का महत्वपूर्ण अंग रही है विभिन्न रूपों में समाहित कलाओं के उल्लेख हमारे वेदों, पुराणों, साहित्यों एवं शास्त्रों आदि से भरे पड़े हैं। विभिन्न दार्शनिकों व विचारको ने कला को अनेक रूपों में परिभाषित किया है। यह कला का सृजनात्मक क्रम है अर्थात् हमारी कलाऐं चलती रहेंगी हमेशा-हमेशा। इसके रूप बदलते रहेंगे जैसा की बदलते आए है। कला धाराओं में अमूर्त कला एक विशाल वृक्ष की तरह हमारे सामने परिलक्षित होती है। अमूर्त कला कोई एक व्यक्ति, धर्म या देश की भाषा नहीं है अपितु यह विश्वव्यापी रूप में हमारे सामने आई है। अमूर्त कला की मान्यता में भौगोलिक एवं सामाजिक वातावरण तथा उपलबध सामग्री माध्यमों में असमानता हो सकती है परन्तु मूल भाव एक हैं।

उन्नीसवीं सदी में हुए यूरोपीय औद्योगिक विकास, वैचारिक क्रान्ति एवं राजनीतिक व सामाजिक उथल-पुथल ने कलाकारों को भी स्वतन्त्र विचार से सृजन करने को प्रेरित कियाजिसके परिणामस्वरूप कलाकारों ने नयी दिशाओं में कदम बढ़ाते हुए भिन्न नये कला प्रवाहों को जन्म दियाजिनमें एक प्रवाह वस्तुनिरपेक्ष कला का था।2अतः कहाजा सकता है कि वर्तमान में जिस कला-शैली व कला-आन्दोलन ने संसार की पूरी पीढ़ी को अपने अंतस में झाँककर शुद्ध वैयक्तिक शैली में कार्य करने को प्रेरित किया वह अमूर्तता के नाम से जानी जाती है।

अमूर्तता किसी बाह्य कारण से या उपयुक्ता की वजह से सुन्दर नहीं है बल्कि सौन्दर्य उसकी प्रकृति में हैं। एवं अमूर्तता से ऐसी सौन्दर्यानुभूति होती है जो निरिच्छ, निर्विकार है। उसे शब्दो में बयान नहीं किया जा सकता है ये व्यक्ति का वह अप्रत्यक्ष व्यवहार है जिसे आज से पहले देखा या समझा नहीं गया है लेकिन ये अमूर्त विचार हर एक के अचेतन मन में अवस्थित होता है जिसे किसी भी क्षण कलाकार चित्र, संगीत व काव्य के माध्यम से प्रसारित करता है भले ही उन विचारों को अपनाया जाये या ना अपनाया जाये। लेकिन कलाकार की कल्पना शक्ति जब अपने अन्त्रमन का ही अवलोकन या साक्षात्कार करती है तो स्वयं ही उसमें से कुछ भाव प्रस्फुटित होते है जो अपना अमूर्तता का गुणलिए होते है जिसे कलाकार शब्दबद्ध रूप में व्याख्यान न कर पाने के कारण चित्र रूप में प्रस्तुत करता है। जिसके लिए उसे किसी भाषा-अर्थ-विषय की आवश्यकता नहीं होती है। क्योंकि ये कला का वह रूप है जहाँ स्वतन्त्र वैचारिकता को महत्व दिया गया है।

अमूर्त कला मानव मन की सौन्दर्यपूर्ण काल्पनिक अभिव्यक्ति का प्रस्तुतिकरण है जिसमें विषय बोध तो नहीं किया जा सकता है लेकिन कलाकार के व्यक्तित्व का मूल्यांकन किया जा सकता है। अमूर्त कला को इंग्लिश भाषा में "एब्स्ट्रैक्ट" या "नोनफिगेरटिव" कला कहते है। "एब्स्ट्रेक्ट" शब्द का मूल अर्थ सारतत्व निकालना है इस कारण कुछ विद्वान "एब्स्ट्रेक्ट" शब्द के प्रयोग के विरुद्ध है क्योंकि उनके विचार से यह शब्द अप्रत्यक्ष रूप से वास्तविकता की रूपजन्म अनुभूति को ही निर्देशित करता है। अतः उनके विचार से "नोनफिगेरटिव" शब्द का प्रयोग अधिक उचित माना जाता है "नोनफिगरेटिव" हो या "वस्तुनिरपेक्ष" सारतत्व एक ही है। अतः वर्तमान में विभिन्न धाराओं से गुजरने के बाद अमूर्त शब्द को अधिक उपयुक्त माना गया है।

समसामयिक भारतीय कला में अमूर्तता का प्रसार

कला का उद्भव व विकास समग्र ऐतिहासिक-सामाजिक प्रक्रिया का अंग है। कलाकार नवीन प्रयोग करते हुए नवीन आयाम स्थापित करता है। वर्तमान में भारत ही नहीं विश्व में प्रयोगधर्मिता को स्पष्ट रूप से चिन्हित किया जा सकता है। परिवर्तन एक निरन्तर प्रक्रिया है जो आदिकाल से विद्यमान है जो भी मान्यताएँ प्रचलित थी वे पीढ़ियों द्वारा स्वीकृत होती हुई आगे बढ़ती हैं। लेकिन एक सजग समुदाय उन मान्यताओं को अस्वीकार करते हुए एक नवीन दिशा एवं नवीन मूल्यों की ओर समाज को ले जाना चाहता है। यही परिवर्तन का प्रारम्भ है कला का ये परिवर्तन

समकालीन कला रूप में हमारे समक्ष है। कलाकार सामूहिक पहचान से हटकर स्वयं की व्यक्तिगत पहचान बनाना चाहता है समकालीन कला जीवन को समझने का एक प्रयास है। आज कलाकार कल्पना में पूर्ण विश्वास रखते हुए, नवीन रूपों का सजृन करना चाहता है - जो प्रकृति में भी देखने को न मिल सकें। इस प्रकार समसामयिक कला का महत्पवूर्ण गुण सदैव प्रयोगवादी होना है प्रयोगवाद में ही प्रवाह है तथा प्रवाह में गति व जीवन की अनुभूति है जिसमें कलाकार यथार्थ से हटकर नवीन दृष्टिकोणों का सूत्रपात कर रहे है एवं खुद की शैली व तकनीक को विकसित कर रहे है। इसी धारणा ने अमूर्तकला आन्दोलन को जन्म दिया। जिसमें कलाकार ने बाह्य सत्य को पकड़ने की मरीचिका को तिलांजलि देकर आत्म-प्रेरणा से प्रस्फुटित रूपाकारों को फलक पर उतारने का कठिन कार्य आरम्भ किया है।[3]

20वीं सदी के आते-आते पश्चिमी कला में प्रभाववाद, नवप्रभाववाद, घनवाद, अभिव्यंजनावाद, संरचनावाद, आदि का जन्म हुआ। जिसमें कलाकारो ने रंग, रेखा, टेक्सचर का मुक्त धरातल पर प्रयोग किया। द्वितीय विश्व युद्ध के बाद विशेषतः अमेरिकी कला में अमूर्तन ट्रेण्ड की होड़ सी मच गई और कई चरणों में विगत कुछ दर्शकों में यह एक विशेष आन्दोलन के रूप में विकसित हुआ। यूरोपीय कला में पिकासो, मीरो, तांग्यूवी, डाली, पॉल-क्ली, होपमान, मौंदियान और अन्य कई चित्रकारों ने प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप से अन्वेषण द्वारा अभिव्यक्ति के नये मार्ग खोले एवं अमूर्त चित्रण प्रवृत्तियों की यंू तो बीसवीं सदी के आरम्भ में मेरीन, डोव,अे.कीफे आदि से शुरूआत हो गई थी इसी दौर में इ.के.मारिस, कॉर्ल हाल्टी, कोम्बग्रीन, डी. कूनिंग, रेटनर, रिकोलबैरन, वॉल्टर स्टयूम किंग, राफेल पीले, चाल्स बीकिंग, मालेबिच, कांडिंस्की, जार्ज बूकर, जैक्सन पोलक, स्टुअर्ट डेविस, राबर्ट मदरबेल, मार्क रोथको, रोबर्ट रोजनबर्ग, फ्रेक स्टेलो, रेनहॉर्ट, निऊमेन आदि कलाकारों के नाम प्रमुख उल्लेखनीय हैं जो अमूर्त कला को स्थापित करने में अग्रणीय रहे है।

भारत में अमूर्त कला का प्रादुर्भाव पुनरूत्थान काल से माना जा सकता है इस समय कलाकारों ने कला में परम्पराओं से हटकर नीवन प्रयोग किये। इनमें सबसे अग्रणी अमूर्त भारतीय कलाकार के रूप में वासुदेव एस. गायतोडें जाने जाते है एवं रामकुमार, एस.एच. रजा, अकबर पद्मसी, बीरेन डे, गणेश हलोई, जहाँगीर सबावाला, रवीन्द्रनाथ टैगोर, अमृता शेरगिल, यामिनी रॉय, गगेन्द्रनाथ आदि भी भारतीय अमूर्त कला के सृजन में कार्यरत रहे।[4]

राजस्थान की समसामयिक कला में अमूर्त कला का प्रादुर्भाव

भारतीय आधुनिक कला परिवेश में 20वीं शती के उत्तरार्द्ध की कला को राजस्थान के कला संदर्भ में देखे तो यह तथ्य रेखांकित होता है कि राज्य में सृजनरत कलाकार भी तत्प्रचलित आधुनिक कला की धारा को आत्मसात कर अपने रचनात्मक बिम्बों को कला सौन्दर्य की एक निजी भाषा देने को आतुर हो रहे थे।यह वह समय था जब बंगाल के पुनरूत्थान का देशज प्रभाव राजस्थान के कलाकारों पर पड़ा जिससे कलाकारों की निजी अभिव्यंजना को अहमियत मिली और इस विचार दृष्टि ने कलाकारों की रचनात्मक संभावनाओं को कई रूपों में विस्तारित किया। कला रचना की कई धाराएं बनी, रचना सौन्दर्य के मायने बदले और कला सौन्दर्यशास्त्र की नई भाषाएं गढ़ी गई। साथ-साथ कलाकार का समाज, प्रकृति, आदमी, औरत व परिवेश को देखने की दृष्टि, कला माध्यम एवं प्रस्तुतीकरण के तौर-तरीकों में भी बदलाव आया। कलाकारों के सृजन को राष्ट्रीय अन्तर्राष्ट्रीय कला जगत में स्थान व पहचान मिली। राज्य के कई कलाकारों को विदेशों में शिक्षा के अवसर मिले जिससे भारतीय कला संस्कृति में अन्य संस्कृतियो का समावेश हुआ तथा कलाकारो को देश-विदेश में अपनी कला प्रदर्शन का मौका मिला।

आधुनिक कला जगत को एक ठोस धरातल प्रदान करने वाले चित्रकारों में राजस्थान के चित्रकारों की भी महत्वपूर्ण भूमिका रही है। राजस्थान में यद्यपि "मदरसा-ए-हुनरी" नामक कला संस्था की स्थापना 1857 ईस्वीं में तत्कालीन महाराजा सवाई रामसिंह द्वितीय ने करवायी जहाँ से राजस्थान की कला में चित्र, शिल्प व हस्तशिल्प की प्रणालियाँ विकसित होने लगी तथा बंगाल के पुनर्जागरण आंदोलन की विशिष्टताओं को लेकर शैलेंद्रनाथ डे का जयपुर आगमन, राजस्थान की कला धारा में एक नवीन दौर का सूत्रपात रहा। असित कुमार हल्दार और शैलेंद्रनाथ-डे के सम्मिलित प्रयासों से "मदरसा-ए-हुनरी" को "राजस्थान स्कूल ऑफ आर्ट" के रूप में नवजीवन मिला। राजस्थान में इन दोनों कला गुरूओं के शिष्यत्व में अनेक कलाकार यहाँ से निकले।

कला अपनी समय की परिचायक होती है उसी तरह स्वतन्त्रता के बाद कलाकारो को भी अपनी वैचारिक स्वतन्त्रता की अहमियत महसूस हुई और स्वतन्त्रता के इस विचार ने भी कलाकारों को

स्वतन्त्र अभिव्यक्ति के रूप में अपने वैचारिक बिम्बों को कला की नवीन भाषा में रचने को प्रेरित किया। 1957 में "राजस्थान ललित कला अकादमी" की स्थापना हुई।5 इससे कलाकारों को एक ऐसा धरातल मिला जिसके माध्यम से न केवल आधुनिक कलाकृतियों को प्रदर्शन का अवसर मिलने लगा अपितु नव कलाकारों में भी रचनात्मक सोच की ऊर्जा का संचार हुआ। आधुनिक कला के सृजन में कला शिक्षको, शिक्षण संस्थाओं व कला समूह एवं कला प्रदर्शन गैलरियो की महत्वपूर्ण भूमिका रही।

विवेचना व समीक्षा के रूप में देखें तो राजस्थान के कला जगत में मूलतः कला सृजन की दो मुख्य धाराएँ आधुनिक सोच के साथ विकसित हुई। पहली धारा जिसमें कलाकारों ने पौराणिक व ऐतिहासिक विषयों के साथ-साथ अपने लौकिक, सामाजिक व सांस्कृतिक परिवेश को चित्रण का मूल विषय बनाया। इसमें रामगोपाल विजयवर्गीय, कृपालसिंह शेखावत, देवकीनन्दन शर्मा, गोवर्धन लाल जोशी बाबा, आर.वी. साखलकर, मोनी सन्याल, बी.सी. गुई, द्वारका प्रसाद शर्मा, नारायण आचार्य, कन्हैया लाल वर्मा, समन्दर सिंह खंगारोत (सागर), नाथुलाल वर्मा, शैल चोपल, ललित शर्मा, व किरण मूर्डिया आदि कलकारों का नाम उल्लेखनीय है तथा इसी क्रम में कला सृजन की दूसरी धारा की समीक्षा करें तो यह स्पष्ट होता है कि यहाँ कलाकारों ने रूप व विषयगत बन्धनों से मुक्त होकर अपनी निजी शैली विकसित करने का प्रयास किया जो आगे चलकर कला में अमूर्तता के रूप में परिलक्षित हुई जिसमें पी.एन. चोयल, सुरेश शर्मा, ज्योति स्वरूप, मोहन शर्मा, लक्ष्मी लाल वर्मा, विद्यासागर उपाध्याय, शब्बीर काजी, भवानी शंकर शर्मा, आर.बी. गौतम, प्रेमचन्द गोस्वामी, मीनाक्षी भारतीय, बीरवाला भावसार, दिलीप चैहान, अब्दुल करीम, अब्बास बाटलीवाला, रामेश्वर सिंह, बसंत कश्यप, हरिशंकर गुप्ता, जगमोहन माथोड़िया, गोपाल शर्मा, धर्मेन्द्र राठौड़, सुरेश जोशी, हरिशिव वर्मा, राम जैसवाल, दिपिका हजारा व अशोक आदि कलाकार प्रमुख है। जिनके प्रयासों से अमूर्त कला के इस आन्दोलन को सक्रियता मिली तथा इनमें से कुछ कलाकार जिन्होंने आजीवन अमूर्त रचनाओं का ही सृजन किया उनमें सुरेश शर्मा, ज्योतिस्वरूप, मोहन शर्मा, विद्यासागर उपाध्याय एवं शबीर हसन काजी आदि प्रमुख अमूर्त कलाकार हैं जिनकी कलाकृतियाँ दर्शक को विषयगत दायरे से मुक्त करती हुई स्वतन्त्र चिन्तन की ओर आकर्षित कर आनन्दानुभूति कराती है।

सुरेश शर्मा उन अग्रणी चित्रकारों में से एक है जिनको राजस्थान में सत्तर के दशक में आरम्भ किया समसामयिक अमूर्त कला आन्दोलन में अपनी विशिष्ट भूमिका निभाई। जिनके योगदान से शायद ही कोई कलाकार व कलाप्रेमी अनभिज्ञ हो।आपका जन्म 1937 ई. में कोटा, राजस्थान में हुआ।आपकी कला पर नन्दलाल बोस, रामकिंकर बैज तथा विनोद बिहारी मुखर्जी का प्रभाव रहा, जिसे प्रवाहमय रेखांकन में देखा जा सकता है।

आपने अपने प्रयोगों के द्वारा राजस्थान में आधुनिक चित्रकला को नवीन दिशा निर्देश व मार्ग दर्शन दिया। इससे पूर्व राजस्थान में परम्परागत व शैलियात्मक तरीके से ही चित्र रचना कार्य हो रहा था लेकिन आपने कलाकार के स्वतन्त्र व्यक्तित्व एवं व्यक्तिवादी चित्रण को महत्व प्रदान किया। एवं स्वयं की स्वतन्त्र व्यक्तिवादी शैली का निर्माण किया। कला क्षेत्र में आपकी इसी नवीन चेतना व प्रेरणा से कई चित्रकारों ने अपनी कला-शैलियों का विकास किया। आपकी कलाकृतियों में यह स्वतन्त्र चिन्तन देखा जा सकता है।

आपकी रूचि प्रारम्भ से ही अमूर्त चित्रण की ओर रही है आपके चित्रो में वस्तु या विषय का प्रस्तुतिकरण नहीं है आप बाहरी वातावरण को देखकर आत्ममंथन कर, अमूर्त रूप में अभिव्यक्ति करते है। आपने एक्रेलिक रंगों से अमूर्त संयोजन बनाये है जो मुख्यतः सपाट जमीन पर स्प्रे से दूसरे रंग द्वारा गइराई उत्पन्न करते है जो समकोण पट्टियों से और भी ज्यादा उभर जाते है। बिन्दु-बिन्दु द्वारा विभिन्न रंगों के कारण चित्र भी कभी-कभी प्रिंट सा लगने लगता है।[6] आपको हार्ड एज, साफ्ट एज एवम् कललिस्ट भी कहते है आप अपनी कृतियों में रंगतो एवम् टेक्चर्स द्वारा एक ऐसा नन्दतिक प्रभाव उत्पन्न करते है जिसने चाक्षुष आकर्षण उत्पन्न हो जाता है। आपकी पहचान आपके अमूर्त चित्र है। जिनमें झिलमिल सा प्रभाव और रंगों की साफगोई है।

आपकी "अनटाइटिल्ड" कलाकृति में समुद्र का विस्तार, गहराई और अनन्त आकाश की अनुभूति को महसूस किया जा सकता है। आपकी कला अमूर्त होते हुये भी प्रभावशाली, भावोद्दीपक और राजस्थानी संस्कृति के समान चमकीले व तेल रंगों से युक्त जीवन व प्रकाश से पूर्ण है। आपकी कला में आपके स्वभाव के अनुरूप स्वच्छन्द भावाभिव्यक्ति रही है तथा आपकी

रचनाओं में व्याप्त रंग-संवेदनाऐं पूर्णतः अमूर्त है, जो चित्र आध्यात्मिक सौन्दर्यानुभूति कराते है। आजकल इनके चित्रों में मिनीमल व हार्डएज का प्रयोग दिखाई देता है, जिसमें बड़े-बड़े फलकों पर सपाट विशुद्ध रंगों के बीच प्रकाशमान पट्टिकाये उभरने लगती है।

अन्टाइटिल्ड, सुरेश शर्मा

आपका सृजन आकृति रहित अमूर्तता का है। आपका कला संसार साधारण भासित रूपों से परे एक स्वप्निल संसार है, जिसमें आकार व विस्तार दोनों का सामजस्य आकाश की भव्यता के समान अनन्त है। आपके फलक आकृति में बंधे रूप नहीं है, अपितु वे निराकार ब्रह्मा के संवाहक की अनुभूति कराते है। विषय, ऋतु के परे रंग पट्टिकाओं एवं रंगतों के स्वच्छन्द व धूमिल होते स्तर, कभी रंग पट्टिाओं में तो कभी चैखानों में बंटे हुए दृष्टिकोण होते है। इस प्रकार आपकी कलाकृतियाँ दर्शक को नवीन अध्यात्मिक विश्व के दर्शन कराती है।

ज्योतिस्वरूपस्वशिक्षित कलाकार रहे। आप राजस्थान के प्रथम अमूर्त एवं अभिव्यंजनावादी प्रवृत्ति के कलाकार थे। आपने राजस्थान के कला इतिहास में आधुनिक एवं अमूर्त कला का सूत्रपात किया। आपके चित्र अपनी विलक्षण शैली के लिए विशेष महत्त्व रखते है।7आपने सुप्रसिद्ध कलाकार कँवल कृष्ण और उनकी पत्नी देवयानी कृष्णा के सम्पर्क में कला की गूढ़ताओं को हदयंगम किया। आप पिकासो, वानगॉग और पालक्ली से प्रेरित नित-नये प्रयोग व परीक्षण करते रहते थे। आपका मानना है कि आधुनिक कलाकार, जो वर्तमान में कार्यरत है उसे स्वभावतः युग-सापेक्ष्य होना चाहिए।

कलाकार ने अपनी अमूर्त रचनाओं में अचल जीवन की भव्यता व रहस्यात्मकता के अंकन किया है जिसमें 'शिवशक्ति', 'इनर जंगल' एवं 'ज्योतिस्वरूप' चित्र श्रंृखलाएं विशेष महत्व रखती हैं लेकिन कलाकार की सही पहचान "इनर जंगल" श्रृंखला से बनी यह चित्र श्रृंखला इस संसार का न होकर स्वप्निल संसार का लगता है। रेखाओं का आरोहण-अवरोहण व रंग तहो का एक ऐसा मायाजाल सा बना हुआ है, जिसके अमूर्त में दर्शक खो सा जाता हैं जिसमें आकारों की असीमितता, स्वच्छन्द संयोजन व विषय-वस्तु की स्वतन्त्रता प्रमुख रही तथा चित्रण में मिक्स मिडिया का उपयोग कर कलाकृतियों को टेक्सचर प्रधान रूपाकारों से तैयार किया तथा स्थिर आकारों के संयोजन की ओर ध्यान दिया है। आप उन कलाकारों में से एक है जो बन्धनों से बंधकर कोई कार्य नहीं करना चाहते हैं आपकी कला में स्वतन्त्रता की पूर्ण झलक देखी जा सकती है।

इनर जंगल : ज्योतिस्वरूप

मोहन शर्माका जन्म 1942 ई. में नाथद्वारा की आध्यात्मिक भूमि पर हुआ। आपके पिता पारम्परिक कला के धनी थे, जिससे आपको बाल्यकाल से ही रंगों और कूंचियों से खेलने का अवसर प्राप्त हुआ तथा आप प्रारम्भ से ही कला संसार में विचरते रहे। अतः कहा जा सकता है कि परिवार के कलात्मक वातावरण व नाथद्वारा के पारम्परिक कला परिवेश ने आपके कला के प्रति ओत-प्रोत मन में कलाकार बनने की रूचि जगाई।

सरलीकृत मूर्त-अमूर्त चित्र फलक व ज्यामितिय रूपाकारों के लिए मोहन शर्मा राजस्थान के उन अग्रणी चित्रकारों में से एक थें जिन्होंने बड़ी अल्प आयु में राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर चित्र प्रदर्शित कर अपनी पहचान कायम की थी।8 आपने कला की प्रारम्भिक शिक्षा 1965 जे.जे. स्कूल ऑफ आट्र्स, मुम्बई से ली। यहाँ आपने

श्रीपलसीकर (जे.जे. स्कूल ऑफ आर्ट्स के प्राचार्य) के सानिध्य में कला शिक्षा ली और श्री पलसीकर जी ने आपकी कला के प्रति लगन को देखकर आपका परिचय प्रसिद्ध कलाकार एफ.एन. सूजा से कराया। सूजा ने अपने कुछ चित्रों के सृजन में इनका सहयोग लिया और इनकी तकनीकी कौशल की भूरि-भूरि प्रशंसा की। इनके वे चित्र 'सूजा कलम' के नाम से प्रदर्शित हुए।9 सूजा के सम्पर्क से इनमें नया विश्वास जागा और आधुनिक कला के विभिन्न आयामें से परिचित हुए।

मोहन शर्मा की कला शैली वैधानिक रूप से पूर्णतया धनवादी रही है। स्पष्ट व तीक्ष्ण रेखांकन द्वारा आपने प्रकाश व रंग के स्फुटिक के समान सपाट व चैकोर आकार निर्मित किये। विलक्षण रंगतों द्वारा कठोर सीमांकन से आकार गठन किया जबकि रेखांकन में यह प्रभाव टेक्सचर द्वारा उत्पन्न किया। आपकी कला अमूर्त होते हुए भी आकारों को अभिव्यंजित करती है जिसमें अन्तः कक्ष में रखी जड़ वस्तुएँ तथा शहरी दृश्य महत्वपूर्ण स्त्रोत रहे है। आपने मूल रंगों की सीमित रंगतों को सूफियाना अन्दाज में प्रयुक्त किया है जिनमें धूमिल पीला, नीला व सलेटी रंगते प्रमुख है।

आपके "स्टिल लाइफ" चित्रों में प्राकृतिक व काल्पनिक रूपाकारों की झलक मिलती है जो आयताकार, गोलाकार, त्रिकोणात्मक व अन्य ज्यामितिय स्थापत्य कला के रूपाकारों का दृश्य-संयोजन है जो इस हद तक सरलीकृत हो जाते है कि वो जमीन व रूढ़ियो से टुटते हुये, अमूर्त चित्र रचना करते है आपके चित्रों में मानव से ज्यादा मानव रचित वस्तुओं का अधिक समावेश है।

आधुनिक नगर बम्बई की भव्य इमारतें, छोटी-बड़ी गलियाँ, पुल, समुद्र के किनारे व चैड़ी सड़के आदि ने इनके मन पर गहरा प्रभाव छोड़ा है जयपुर के जन्तर-मन्तर, ऐतिहासिक इमारतें, चैड़ी सड़के तथा गलियाँ, लन्दन प्रवास में भी दर्शनीय उच्च अट्टालिकाएँ, एक-दूसरे स्थलों को जोड़ते बड़े पुल, नदियाँ, चर्च, जल पर थिरकती प्रकाश की किरणें उनको आकर्षित करती रही। यही विषय इनके बनाए चित्रों में प्रतिबिम्बित होते रहे है। आपके द्वारा बनाये गये रेगिस्तान की सुनहरी बालु रेत के दृश्य चित्र भी दर्शकों को आकर्षित करते है जिन्हें आपने 'डेजर्ट शीर्षक' टाइटल दिया है।

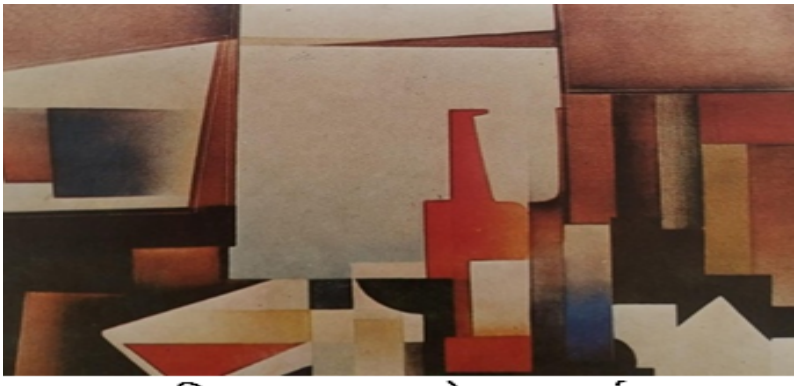

स्टिललाइफ, मोहन शर्मा

विद्यासागर उपाध्यायराजस्थान के सुप्रसिद्ध अग्रणी एवम् प्रतिभाशाली अमूर्त चित्रकारों में से एक है जिन्होंने अपनी प्रतिभा के कारण अखिल भारतीय स्तर पर अमूर्त चित्रकारों के रूप में पहचान बनाई। आपने 1970 ई. में मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय के चित्रकला विभाग से

स्नातकोत्तर उपाधि चित्रकला विषय में ली। कला यात्रा के प्रारम्भिक दौर में आपकी रूचि दृश्य चित्रण में ही देखी जा सकती है आपको राजस्थान ललित कला अकादमी, जयपुर से प्रथम पुरस्कार भी दृश्य-चित्र पर 1969 ई. में मिला था, जो यथार्थवादी शैली में चित्रित था।[10]

आपने प्रारम्भ से ही कागज पर रेखांकन कर पेन्टिंस बनाई है जिसमें नये आकारों के सृजन करने का प्रयास किया गया है। रेखांकन के कार्यकाल में आपकी प्रिय पेन्सिल 3-बी रही थी जिसका सघन प्रयोग करते हुए आपने माध्यम की कोमल संवेदनशीलता से रिश्ता कायम किया।

आपने लगभग 1974 ई. से श्वेत-श्याम रंगतो में तैल व एक्रेलिक रंगों द्वारा चित्रण किया है श्वेत श्याम का ये दौर लगभग 20 वर्षो तक चला। आपकी कला में तकनीक व माध्यम की विविधता है आपने कागज, केनवास, कावड़, कपड़ा आदि पर चित्रण किया। केनवास में आपके चित्रों की एक महत्वपूर्ण विशेषता हैं की आपने चैकोर, लम्बवत्, क्षितिजीय, गोल व त्रिकोण केनवास का प्रयोग किया है आपने पेन्सिल, तेल रंग, एक्रेलिक रंग के साथ-साथ डाई पेस्टल व जल रंगों में भी खूब चित्रण किये है। चित्रण के अतिरिक्त छापा चित्रण की विविध तकनीकों (एचिंग, इण्टाग्लियो व लिथोग्राफ)में भी आप पारंगत है। आपके चित्रों का शीर्ष ज्यादातर "अनटाइटल" ही रहा है।

विद्यासागर की कला ने राजस्थान को अपने काम में बरकरार रखा है पर रंगो की भरमार को हटाकर, उन्होंने अपनी कला का एक नया और अलग संदर्भ भी बनाया है, यह महत्वपूर्ण है कि उनकी शैली की पहचान में इस स्थिति का भी एक योगदान है विद्यासागर की कला को स्याह-सफेद ड्राइंग यदि कहा जाये तो अधिक उपयुक्त होगा। इनमें काले रंग का प्रभावपूर्ण प्रयोग मिलता है इनके चित्रों में पहाड़ी व पठार के छोटे-छोटे या भारी भरकम पत्थर इस तह टिके हुए होते है कि कैनवास के पास जाने पर पत्थर के अचानक गिर जाने की संभावना का खतरा उपजे बिना नहीं रहता।

एक बात और जब हम काले रंग की बात कर रहे है तो कागज या कैनवास के सफेद हिस्से को भी भुला नहीं सकते। काले की सारी क्रियाएँ, सफेद के "माध्यम" से ही तो सामने आती हैं। फिर स्वयं काले की जो विविध रंगते बनती हैं, वे सफेद का "विचार" रखे बिना संभव ही नहीं हो सकती। दरअसल विद्यासागर की कला एक अरसे तक काले के साथ एक यात्रा रही है।

विद्यासागर की कला में नब्बे के दशक से स्याह रंग केनवास से कम होता गया और स्पेस उसकी जगह लेता गया। आपने रंगो का प्रयोग प्रारम्भ किया। आपने आँखों को आनन्द देने वाले हरे, लाल, बैंगनी, नीले, नारंगी आदि विशुद्ध रंग काले के साथ,प्रयोग किये जिनमें, राजस्थान लोक संगीत की जीवन्त अभिव्यक्ति होती है। आपके द्वारा जिस तरह से रंगों का चित्रो में प्रयोग हुआ है वह दृश्यांकनों में रंगतों से ही परिपेक्ष्य और चीजों के बीच सापेक्षिक दूरियों का अहसास जगाते हैं। रंगों के चयन को विद्यासागर अपनी इस नई चित्र श्रृंखला के लिए काफी ऊर्जादायक मानते है। उनका विचार यह भी है कि "इन रंगों में मैं एक ऐसी तरल, पाददर्शी और संवेदनशील सृष्टि खोज सकता हूँ जिसकी अभिव्यक्ति दूसरे किसीमाध्यम से शायद अपेक्षाकृत कठिन होती।

विद्यासागर उपाध्याय ने राजस्थान में आधुनिक कला को नित नये आयाम ही नहीं दिये हैं बल्कि प्रयोगधर्मिता के नये रास्ते खोलकर कला को सामाजिक आन्दोलन बनाने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।[11]

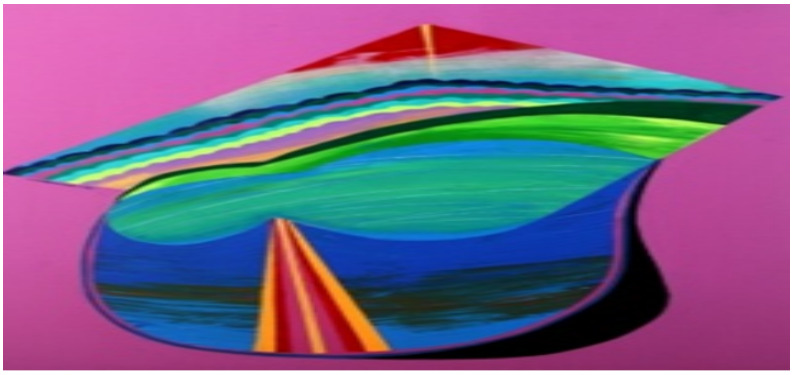

अनटाईटल्ड, विद्यासागर

शबीर हसन काजीका जन्म 1946 ई. में अजमेर, राजस्थान में हुआ। इनकी प्रारम्भिक कला शिक्षा उदयपुर विश्वविद्यालय से 1969 ई. में हुई तथा इनकी कला में ज्यामितीय आकारों का समावेश है जिसमें बैलेन्स को ज्यादा ध्यान में रखा गया है इनके चित्रों में बेहद रंगीन वातावरण मिलता है जिसमें सपाट आकारों की रचना की गयी है। इन्होंने राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर कई प्रदर्शनीयों में अपने चित्रों को प्रदर्शित किया है। इन्होंने राजस्थान विश्वविद्यालय के ललित कला संकाय में चित्रकला अध्यापन का कार्य भी किया है।12 साथ-साथ अमूर्त कला में नवीन प्रयोग किये जो ज्यामितीय प्रारूप में प्रदर्शित हुये।

इनकी 'अन्टाइटल्ड' चित्र शृंखला में छोटी-छोटी तीखी चटकीले रंगों वाली अमूर्त आकृतियाँ होती है, जो ऐक्रेलिक रंगों से कैनवास पर बनाई गयी है जिसमें ज्यामितिय आकारों को संयोजित किया गया है। जिसमें पृष्ठभूमि अवसर गहरे रंग की होती है जिसके कारण हल्के एवं उज्जवल रंगों की आकृतियाँ उभरती हुई प्रतीत होती हैं। शबीर हसन काजी मूलतः अन्तः मनः स्थितियों का चित्रण करते है। इनके सभी चित्रों में आकृतियाँ बिखरी हुई प्रतीत नहीं होती, बल्कि एकसूत्र में पिरोई जान पड़ती है। इसी कारण इनके चित्र बरबस ही दर्शक का मन मोह लेते हैं।

शबीर हसन

राजस्थानी समसामयिक कला में अमूर्त कला की प्रासंगिक भूमिका

कला के इतिहास का व्यापक परिशीलन करने पर स्पष्ट हो जाता है कि समाज में हुए वैचारिक परिवर्तनों का कला के स्वरूप पर भी परोक्ष या अपरोक्ष प्रभाव पड़ा। इसके साथ यह भी दिखाई देता है कि मानव के सामाजिक व सांस्कृतिक विकास में कला की महत्वपूर्ण भूमिका रही है एवं कला के बिना मानव जाति के सर्वागीण विकास की कल्पना भी सम्भव नही है। अतः कला व समाज के पारस्परिक सम्बन्ध की उपेक्षा नही की जा सकती है। क्योकि कला में एक नैसगिंक मांगलिक शक्ति रहती है जो आधुनिक युग में बिगडे हुये 'आध्यात्मिक' स्वास्थ्य को सुधार सकती है। इस तरह हम देख सकते है कि समाज के विकास में समसामयिक युग की विभिन्न कला स्वरूपों की महत्वपूर्ण भूमिका रही है जिसमें अमूर्त कला का विशेष योगदान है।

अमूर्तता दृश्य, साहित्य व कला के निष्पादन में एक ऐसी चेष्ठा या प्रवृत्ति है जो वैयक्तिक विषयपरकता, भावनाओं व संवेगों को अभिव्यक्ति देती है उसमें वस्तुपरकता अथवा वास्तुविकता को स्थान नहीं हैं, यह आन्दोलन एक प्रतिक्रिया स्वरूप उत्पन्न हुआ जो कि यूरोप में मानवीकरण के विरोध में पनपा था जिसमें कलाकार अपने संवेगीय अनुभवों द्वारा किसी भी रूपाकार को उसके यथार्थ से किसी नये रूप में प्रदर्शित करने का प्रयास कर रहे थे तथा कलाकारों द्वारा किसी भी विषय-वस्तु को उसके अर्थ से हटकर कुछ नये अर्थों में दर्शाना था अथवा सार रूप में प्रकट करना था।

समकालीनता, द्वितीय विश्व युद्व के बाद की कठिन व समस्यापूर्ण मनोवैज्ञानिक एवं सामाजिक स्थिति का तीव्र व परिणामकारी दर्शन है। अर्थात् इस आक्रमक स्थिति का कलाकारों द्वारा अपने मनोभावों से चित्रण किया गया जिसमें सामाजिक, राजनैतिक व मानसिक समस्याओं का चित्रण, विकृत रूपाकारों में कलाकारो ने प्रतीकात्मक रंगों व भावनाओं द्वारा प्रस्तुत किया, जिससे नयी चित्र सृष्टि का सृजन हुआ और कलाकारो ने अपनी स्वतन्त्र अभिव्यक्ति या आन्तरिक जीवन को प्रकाशित करने के उद्देश्य से कला-कार्य किया। एवं कलाकार ने बने-बनाये ढ़ाँचे से हटकर रंगांे, रेखाओं, आकृतियों आदि के द्वारा नवीन आयामों की खोज कर स्वयं की स्वतन्त्र अभिव्यक्ति की। कलाकारो द्वारा चित्र सृजन का मूल उद्देश्य मानवीय संवेदनाओं को उजागर करने से है जिसका प्रेरणा स्त्रोत कलाकार का अन्तःकरण होता है।13जिससे निर्मित कलाकृति में

दर्शक, कलाकार की भावनाओं से पूर्ण तादात्मय स्थापित कर लेता है तथा दर्शक को आनन्द की अनुभूति होती है। ऐसी कलाकृतियाँ सौन्दर्याभिव्यक्ति की परिचायक होती है जिन्हें हम समसामयिक कला जगत में युग-साम्पेक्ष कला के रूप में देख सकते हैं जो समय के परिवर्तन के साथ-साथ अपने स्वरूप में भी परिवर्तन लाती रहती है जिसमें कलाकार की कल्पना-शक्ति का विशिष्ट सराहनीय योगदान है जो आने वाली पीढ़ी के लिए प्रेरणा स्त्रोत है। अतः कला का यह परिवर्तन समसामयिक कला में अमूर्त कला के रूप में हमारे समक्ष परिलक्षित है।

अमूर्त कला ने यूरोपीय कलाकारों के साथ-साथ भारतीय कलाकारों को भी अत्यधिक प्रभावित किया जिससे कला के स्वरूप में नवीनता आयी तथा कलाकारों ने अमूर्त के सौन्दर्य को अपनाया।इस तरह भारतीय कला में आये परिवर्तनों से राजस्थान के कलाकारों पर भी गहरा प्रभाव पड़ा जिससे कलाकारों ने रूप सौन्दर्य के बन्धन से मुक्त होकर रूप विहिन सौन्दर्य को अपनाकर, कलाकार की स्वतन्त्र अभिव्यक्ति को महत्व दिया। अतः हम कह सकते हैं कि समसामयिक कला में अमूर्त कला की विशिष्ट प्रासंगिक भूमिका रही है।

निष्कर्ष

समसामयिकता की इस दौड़ में अमूर्त कलाकारों ने अपनी आत्माभिव्यक्ति का मंथन कर अपने स्वतन्त्र भावों का प्रस्तुतीकरण किया है जिसमें कलाकार विषयगत बन्धनों से मुक्त होकर नये-नये आधार व सतहों का प्रयोग कर, निरन्तर बदलाव व नवीनता लाने का प्रयास कर रहा है। जिससे वह अपनी नवीन शैली को विकसित कर सके ताकि आने वाले समय में उसकी कलाकृतियाँ आधुनिकता की परिचायक हो।

प्राचीन काल से हम देखें तो स्पष्ट होता है कि कलाकार दृश्य जगत को ही चित्रित करता आया है लेकिन कला के इस सफर में 20वीं सदी अत्यन्त महत्वपूर्ण साबित हुई जहाँ कलाकारों ने दृश्य यथार्थ के भीतर छुपे वस्तुनिरपेक्ष गुण को पहचाना और उसके सौन्दर्य को स्वीकार किया। इस तरह कलाकार ने अपने काल्पनिक भावों को स्वरूप देकर, अपनी आन्तरिक अभिव्यक्ति का चित्रण किया है जो समसामयिक कला के क्षेत्र में अमूर्त कला के रूप में महत्व रखती हैं। अतः हम कह सकते हैं कि अमूर्त कला ने कला जगत के हर दशक को प्रभावित करते हुए कलाकारों को सृजनात्मकता के क्षेत्र में नवीन मंच प्रदान किया है जहाँ कलाकार स्वतन्त्र होकर चित्रण कर रहा है और राष्ट्रीय-अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर अपनी पहचान बना रहा है।

संदर्भ

1. *चतुर्वेदी, ममता . समकालीन भारतीय कला, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, 2017, पृ.सं. 2-3*
2. *साखलकर, र.वि. . कला के अन्तःदर्शन, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, 2004, पृ.सं. 171*
3. *उपाध्याय, विद्यासागर . अमूर्त कला विशेषांक-आकृति, राजस्थान ललित कला अकादमी, जयपुर, 1995, पृ.सं. सम्पादकीय से।*
4. *गौतम, आर.बी. . राजस्थान की समसामयिक कला, राजस्थान ललित कला अकादमी, जयपुर, 1989, पृ.सं. 54*
5. *चतुर्वेदी, ममता . समकालीन भारतीय कला, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, 2017, पृ.सं. 176*
6. *सुमहेन्द्र . आकृति-80, राजस्थान ललित कला अकादमी, जयपुर, 1982, पृ.सं. 71*
7. *गौतम, आर.बी. . राजस्थान की समसामयिक कला, राजस्थान ललित कला अकादमी, जयपुर, 1989, पृ.सं. 55*
8. *रीता प्रताप . भारतीय चित्रकला एवं मूर्ति कला का इतिहास, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, 2014, पृ.सं. 433*
9. *शर्मा, भवानी शंकर . मोनोग्राफ, राजस्थान ललित कला अकादमी, जयपुर, 1990, पृ.सं. 2*
10. *चतुर्वेदी, ममता . समकालीन भारतीय कला, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, 2017, पृ.सं. 144*
11. *व्यास, राजेश कुमार . कलावाक्, राजस्थान ललित कला अकादमी, जयपुर, 2010, पृ.सं. 75*
12. *उपाध्याय, विद्यासागर . राजस्थान के रंग, जवाहर कला केन्द्र, जयपुर, 1998, पृ.सं. 53*
13. *हटवाल, एकेश्वर . आकृति वार्षिकी, राजस्थान ललित कला अकादमी, जयपुर, 1991-92*